संस्थापित १८६७ ई.

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

आजीवन शुल्क ₹ २,५००
वार्षिक शुल्क ₹ २००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) एक प्रति ₹ ५.००

● वर्ष : १२८ ● संयुक्तांक : २६ ● २६ जून, २०२३ (गुरुवार) आषाढ़ शुक्लपक्ष एकादशी सम्वत् २०८० ● दयानन्दाब्द १६६ वेद व मानव सृष्टि सम्वत्:१६६०८५३१२४

"आर्य वीर-वीरांगना प्रशिक्षण शिविर संतानों की सुरक्षा का अचूक संबल"

युवाओं के शारीरिक, बौद्धिक व आत्मिक विकास हेतु शिविर आवश्यक

–देवेंद्रपाल वर्मा

आर्य वीर वीरांगना प्रशिक्षण शिविर के भव्य समापन के अवसर पर दिनांक २७ जून २०२३ को माता प्रसाद इंटर कालेज, टिकरा मवाई, कौशांबी में विशेष आमंत्रित अतिथि के रूप में संबोधित करते हुए आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री देवेंद्रपाल वर्मा ने कहा कि "महर्षि दयानंद सरस्वती की दूरदर्शिता व आर्य समाज की स्थापना का सुफल है। जो आज इन आर्य वीरों व वीरांगनाओं का प्रशिक्षण शिविर व व्यायाम प्रदर्शन हमारी संतानों की सुरक्षा का अचूक संबल है। आज देश व प्रदेश के छद्म वातावरण में युवाओं के शारीरिक, बौद्धिक व आत्मिक विकास हेतु आर्य वीर दल का शिविर अति आवश्यक है। आर्य संस्कृति व संस्कारों में पले बढ़े युवा सूर्य के समान सदैव प्रदीप्त रहते हैं जीवन के झंझावतों में वह तनिक भी विचलित नहीं होते।

सभा प्रधान ने कालेज के प्रबंधक श्री अजय श्रीवास्तव को शिविर के सफल संचालन व सुप्रबन्धन की सराहना करते हुए शिविर को युवाओं के लिए तीर्थ के समान कहा। शिविर में प्राप्त प्रशिक्षण से कठिन परिस्थितियों में बच्चे अपनी सुरक्षा कर सकते हैं। आज समाज के हर युवा को इस प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता है।

समारोह के मुख्य अतिथि राज्य सूचना आयुक्त श्री नरेंद्र कुमार श्रीवास्तव, पूर्व सांसद श्री शैलेंद्र कुमार आदि ने भी संबोधित किया। कार्यक्रम में एस.डी.एम. कौशांबी नायब तहसीलदार कौशांबी, आचार्य रवि शास्त्री, आचार्य धर्मवीर आर्य, शिक्षिका सृष्टि जी, समीक्षा जी, प्रबंधक निदेशक श्री अनुभव श्रीवास्तव, कमलेश कुमार, दिलीप श्रीवास्तव, अरविंद जी, सुश्री प्रियंका द्विवेदी आदि की गरिमामई उपस्थिति थी। कालेज के शिक्षक व शिक्षिकाओं का सहयोग विशेष सराहनीय रहा।

कार्यक्रम के अंत में सुशीला देवी कालेज ऑफ फार्मेसी के एच.ओ.डी. श्री आकाश श्रीवास्तव ने समस्त अतिथि गणों को स्मृति चिन्ह देकर सम्मानित किया। शिविर की प्रशिक्षिका, शिक्षिकाओं को सम्मानित कर प्रशिक्षार्थी वीर वीरांगनाओं को प्रशिक्षण प्रमाण पत्र दिए गए।

●●●

वेदामृतम्

कारुरहं ततो भिषग, उपलप्रक्षिणी नना।
नानाधियो वसूयवो, अनु गा इव तस्थिम, इन्द्रायेन्दो परिस्रव।। ऋ. ६.११२.३

एक परिवार के हम विभिन्न सदस्य जीविका-उपार्जन के लिए विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए हैं। मैं स्वयं शिल्पी हूँ, लकड़ी आदि सामग्री से विविध सुन्दर कलापूर्ण वस्तुओं का निर्माण करता हूँ। साथ ही मैं सरस्वती का उपासक भी हूँ, गीत रचता हूँ। मेरी कला-कृतियाँ धनी-गरीब सबके घरों की शोभा बढ़ाती हैं। मेरे रचे गीत सहृदयों के हृदय-हार बनते हैं। कला-कृतियों का मैं मूल्य लेता हूँ, पर गीत विन-मोल देता हूँ। मेरे पिता और मेरा पुत्र भिषक् है, उनकी औषधि में गुण है, उनके हाथ मे यश है। वे आतुरों के रोग हरते हैं, पीड़ितों का दर्द दूर करते हैं। मेरी माता और मेरी पुत्री जौ या गेहूँ को भाड़ में भूनकर और चक्की से पीसकर सात्विक सत्तू तैयार करती हैं। इसीप्रकार परिवार के अन्य लोग भी अपनी-अपनी रुचि के अनुसार विभिन्न कार्यों में लगे हुए ही अपने-अपने योग्य विभिन्न स्थानों पर स्थित हैं, जैसे गोएँ गोशाला में अपने नियत स्थानों पर स्थित रहती हैं। हममें से किसी का भी व्यवसाय अपवित्र या अधर्म-पूर्ण नहीं है। हम में से किसी का भी उद्देश्य जिस-किसी भी शुभ या अशुभ मार्ग का अवलम्बन करके धन कमा लेना नहीं है।

यह तो हमने अपने विभिन्न जीविका के कार्यों का विवरण प्रस्तुत किया है। असल में तो हम सब इस नाते एक हैं कि हम एक ही प्रभु की अमृत-सन्तान हैं । हे प्रभु ! तुम 'इन्दु' हो, भक्त के हृदय को अपने आनन्द-रस से आर्द्र करनेवाले हो। तुम 'सोम' हो, रस के आगार हो। तुम 'पवमान' हो, हम नीचे खड़े हुओं की ओर प्रवाहित होनेवाले हो । हे इन्दु ! तुम अपने आनन्द-रस के साथ हममें से प्रत्येक आत्मा के परिस्रुत होवो, प्रवाहित होवो। हम सबको समान रूप से अपना रस-पान कराओ। हमारा सारा परिवार तुम्हारे रस का प्यासा है।

- **यज्ञ - ऋषि दयानंद की दृष्टि में।**
- **क्या आज हम कर्मयोगी नहीं, कर्मकाण्डी पैदा कर रहे हैं ?**
- **क्या आर्यसमाज मिशनरी के स्थान पर पुरोहित मण्डली तैयार कर रहा है ?**
- **क्या आर्यसमाज में यज्ञ के रूप में कैन्सर फैल रहा है ?**

–स्वामी (डा.) सत्य प्रकाश सरस्वती

'यज्ञेन कल्पन्ताम्' (यजु. अध्याय १८), 'यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः।' (यजु. ३१.१६), 'यज्ञो यज्ञेन कल्पताम्' (१८.२९) - इन वाक्यों के नूतनतम अर्थ हमें धीरे-धीरे समझ में आवेंगे।

मैं अभी करनाल (हरियाणा) में अपनी दाहिनी आँख नई करवा के आया हूँ, डॉ. जे.के. पसरीचा की यज्ञस्थली में मानो 'चक्षुर्यज्ञेन कल्पताम्' (यजु. १८.२९) का यज्ञ कराया हो।

कुछ मास पूर्व मैंने बम्बई के हिन्दूजा अस्पताल में प्रोस्टेट-ऑपरेशन द्वारा अपने जीवन की नई आयु प्राप्त की थी (आयुर्यज्ञेन कल्पताम्)। ऋषि दयानन्द की दृष्टि में यह सब यज्ञ है। इन यज्ञों में भाग लेने वाले ही ऋत्विक, होता, अध्वर्यु हैं। इसी प्रकार के होताओं को दृष्टि में रखकर यजुर्वेद, अध्याय २१ के ४८-५८ मन्त्रों में बार-बार 'दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज' और इससे पूर्व 'पयः सोमः परिमृता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज' (मन्त्र २९-४७), यजुर्वेद संहिता में पठित है।

स्वामी दयानन्द की कल्पना के यज्ञ क्या है, यह समझना हो तो यजुर्वेद अध्याय २१ के मन्त्रों के भावार्थ देखिये। ये यज्ञ काष्ठाग्नि में घृत और हव्य डालना नहीं हैं।

ऋषि दयानन्द की कल्पना उदात्त समाज के निर्माण की थी, जिसमें सभी शास्त्रों की विद्यायें विकसित हों, सभी विषयों के ज्ञाता हों और सभी प्रकार के सर्वोपयोगी संस्थान हों। उनकी दृष्टि में यजुर्वेद का २१वाँ अध्याय इन्हीं प्रेरणाओं का स्रोत है। आज आर्यसमाज के यज्ञ और हमारे याज्ञिक आर्यसमाज को भटका रहे हैं और हमारे पुरोहित और विद्वान् हमें फिर उस ओर ढकेलने में कटिबद्ध हैं, जिस ओर से ऋषि हमें बचाना चाहते थे।

महर्षि ने 'वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज' (२१.४८-५८) मन्त्रों के भावार्थों में भी उदात्त प्रेरणायें दी हैं।

यजुर्वेद के १८वें अध्याय में 'यज्ञेन कल्पताम्' पद मन्त्र १.१७ और २९ में बराबर प्रयुक्त हैं, जिनमें भी ऋषि दयानन्द ने यज्ञ के कर्मोदात्त और कर्म प्रेरक अर्थ दिए हैं, कर्मकाण्डी अर्थ नहीं। स्वामी दयानन्द की कल्पना का आर्य परिवार रूढ़ि अर्थों में याज्ञिक

शेष पृष्ठ ३ पर.....

देवेन्द्रपाल वर्मा – प्रधान/संरक्षक
पंकज जायसवाल – मंत्री/सम्पादक
आर्य शिवशंकर वैश्य – प्रबन्ध सम्पादक

सम्पादकीय.....

स्वयं का शुद्धिकरण

यदि आप दूसरे के घर की सफाई तो करें, उसके घर में झाड़ू पोंछा लगाएं, और अपने घर की सफाई करें नहीं, अपने घर में झाड़ू पोंछा लगाएं नहीं, तो इसका परिणाम यह होगा कि ''एक - तो इस काम में आपका मूल्यवान समय भी खर्च होगा। और दूसरा - आपका घर गंदा रहेगा, वह साफ नहीं हो पाएगा। कुल मिलाकर इस काम में आपको लाभ कम और हानि अधिक होगी।''

यदि आप पहले अपने घर में झाड़ू पोंछा लगाएं, घर की साफ सफाई करें, तो इसमें भी आपका मूल्यवान समय खर्च होगा। ''परन्तु इसमें आपको लाभ अधिक होगा। आपका घर साफ सुथरा रहेगा। और घर का वातावरण स्वास्थ्यवर्धक (हाइजीनिक) होगा।'' ''इसलिए दूसरे के घर में झाड़ू पोछा करने से पहले, अपने घर में झाड़ू पोछा करें। पहले अपने घर की सफाई करें। जब आपका अपना काम पूरा हो जाए, फिर दूसरे की भी सहायता करें, तब तो बहुत अधिक लाभ है।''

इसी प्रकार से यदि आप अपना सारा समय दूसरों के दोष ढूंढने में ही लगाते रहते हैं, दूसरों को ही दोष बताते रहते हैं। ''वह भी उनके हित की भावना से नहीं, बल्कि उन्हें ब्लैकमेल करने की भावना से, उन्हें डराने धमकाने की भावना से, उनको बदनाम करने और दुख देने की भावना से, यदि आप यह कार्य करते हैं, तब तो आप बहुत ही अधिक घाटे में हैं।'' ''क्योंकि आपके जीवन का मूल्यवान समय इस बुरे काम में व्यर्थ नष्ट हो रहा है, और आप का पाप कर्म भी जमा हो रहा है, जो आपको आगे चलकर भयंकर दुख देगा।''

इसके विपरीत, ''यदि दूसरे के हित की भावना से आप उसका दोष देखें, और उसके दोष को दूर करने के लिए उसे प्रेम से सुझाव दें, उसके हित के लिए सुझाव दें, तब आप के मूल्यवान समय का सदुपयोग भी होगा और आपको इस का पुण्य भी मिलेगा।''

''इसलिए अच्छा यही है, कि पहले अपनी सफाई करें, अपनी शुद्धि करें। अर्थात पहले अपने दोषों को ढूंढकर दूर करें। अपने अंदर उत्तम गुणों को धारण करें।'' ''जब आपके अंदर बहुत से उत्तम गुण स्थापित हो जाएं, और आपके बहुत सारे दोष दूर हो जाएं, तब आप दूसरों की सेवा करने का संकल्प लें।'' ''ऐसा करना तो उत्तम है। ऐसा करने से आपका जीवन सार्थक और सफल होगा।''

हर व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को शिक्षा देने के लिए तैयार बैठा है। ''संसार में और कोई वस्तु मुफ्त में मिले या ना मिले, परंतु सलाह सुझाव या शिक्षा तो मुफ्त में मिलती है।'' ''शिक्षा अर्थात सलाह या सुझाव।'' संसार में एक से एक व्यक्ति बैठे हैं बढ़िया-बढ़िया सुझाव देने वाले। और उनमें से बहुत से सुझाव वास्तव में अच्छे होते भी हैं। ''इतने अच्छे होते हैं कि यदि उन पर व्यक्ति आचरण कर ले, तो उसका बेड़ा पार हो सकता है। वह कितने ही दुखों से छूट कर अत्यंत सुखी हो सकता है।''

परंतु आश्चर्य की बात या अफसोस की बात तो यही है कि ''सुझाव देने वाले लोग, दूसरों को शिक्षा देने वाले लोग, स्वयं उस पर आचरण नहीं करते। न तो शिक्षा देने वाले स्वयं आचरण करते, और न ही वे लोग आचरण करते, जिनको वह सुझाव या शिक्षा दी जा रही है। दोनों में से कोई भी आचरण नहीं करता, इसलिए उस शिक्षा के लाभ से दोनों व्यक्ति वंचित रहते हैं।'' जैसे कि उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति कहता है कि ''अभिमान नहीं करना चाहिए. अभिमान करने से बुद्धि नष्ट हो जाती है.''

अब यह शिक्षा तो बहुत अच्छी है। ''परन्तु यह बात कहने वाला व्यक्ति स्वयं अत्यंत अभिमानी देखा जाता है।'' सारे लोग तो ऐसे नहीं होते, फिर भी ''बहुत से लोग ऐसे देखे जाते हैं, जो अत्यंत अभिमानी होते हैं, और दूसरों को कहते हैं, कि तुम अभिमान मत किया करो।'' ''वे स्वयं तो अति क्रोधी होते हैं, और दूसरों को कहते हैं कि तुम क्रोध मत किया करो।''

''वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति चाहे बुद्धिमान हो या न हो, फिर भी स्वयं को बहुत बुद्धिमान मानता है। इसी कारण से वह दूसरे की सलाह सुनना नहीं चाहता। दूसरे का सुझाव सुनना नहीं चाहता।'' ''इससे उसके आत्मसम्मान को या अभिमान को ठेस पहुंचती है। इसीलिए लोग दूसरे की शिक्षा या सुझाव को ध्यान पूर्वक नहीं सुनते और न ही उस पर आचरण करते।''

चलो कोई बात नहीं। दूसरे लोग आपकी शिक्षा या सुझाव पर आचरण नहीं करते, न करें। उन्हें छोड़ दीजिए। कम से कम आप अपना तो कल्याण कर लीजिए। ''जो शिक्षा आप दूसरों को देते हैं, पहले उसे अपने ऊपर तो लागू कर लीजिए। स्वयं तो उस पर आचरण कीजिए, और फिर देखिए -- आपका जीवन स्वर्ग बन जाएगा।'' ''जब आपका जीवन स्वर्ग बन जावे, तब दूसरों को यह सोचकर सलाह दीजिए, कि ''यदि कोई व्यक्ति मेरी बात मान लेगा, तो ठीक है. वह अपना कल्याण करेगा. और यदि नहीं मानेगा, तो कोई बात नहीं. मेरी शिक्षा मेरे पास है। वह यदि लाभ नहीं उठाता, तो मैं इसमें कुछ नहीं कर सकता। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छा से जीने को स्वतंत्र है।'' ''ऐसा सोचकर आप तब दुखी न हों, और अपने आनन्द में मस्त रहें।''

-स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक,
की कलम से।

गतांक से आगे.....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ त्रयोदश समुल्लास

अथ कृश्चीनमत विषयं व्याख्यास्यामः

जबूर का दूसरा भाग

काल के समाचार की पहली पुस्तक

मत्ती रचित इज्जील

८०- यीशु ने उनसे कहा मैं तुम से सच कहता हूँ कि नई सृष्टि में जब मनुष्य का पुत्र अपने ऐश्वर्य के सिंहासन पर बैठेगा तब तुम भी जो मेरे पीछे हो लिये होय बारह सिंहासनों पर बैठ के इस्राएल के बारह कुलों का न्याय करोगे। जिस किसी ने मेरे नाम के लिये घरों वा भाइयों वा बहिनों वा पिता वा माता वा स्त्री वा लड़कों वा भूमि को त्यागा है सो सौ गुणा पावेगा और अनन्त जीवन का अधिकारी होगा। -३० म० प० १९ २० २८ २९।।

(समीक्षक) अब देखिये ईसा के भीतर की लीला! मेरे जाल से मेरे पीछे भी लोग न निकल जायें और जिसने ३०) रुपये के लोभ से अपने गुरु को पकड़ा, मरवाया वैसे पापी भी इसके पास सिंहासन पर बैठेंगे और इस्राएल के कुल का पक्षपात से न्याय ही न किया जायेगा किन्तु उनके सब गुनाह माफ और अन्य कुलों का न्याय करेंगे। अनुमान होता है इसी से ईसाई लोग ईसाइयों का बहुत पक्षपात कर किसी गोरे ने काले को मार दिया हो तो भी बहुधा पक्षपात से निरपराधी कर छोड़ देते हैं। ऐसा ही ईसा के स्वर्ग का भी न्याय होगा और इससे बड़ा दोष आता है क्योंकि एक सृष्टि की आदि में मरा और एक 'कयामत' की रात के निकट मरा। एक तो आदि से अन्त तक आशा ही में पड़ा रहा कि कब न्याय होगा ? और दूसरे का उसी समय न्याय हो गया। यह कितना बड़ा अन्याय है और जो नरक में जायगा सो अनन्त काल तक नरक भोगे और जो स्वर्ग में जायेगा वह सदा स्वर्ग भोगेगा यह भी बड़ा अन्याय है। क्योंकि अन्त वाले साधन और कर्मों का फल भी अन्त वाला होना चाहिये। और तुल्य पाप व पुण्य दो जीवों का भी नहीं हो सकता। इसीलिये तारतम्य से अधिक न्यून सुख दुःख वाले अनेक स्वर्ग और नरक हों तभी सुख दुःख भोग सकते हैं। सो ईसाइयों के पुस्तक में कहीं व्यवस्था नहीं। इसलिये यह पुस्तक ईश्वरकृत वा ईसा ईश्वर का बेटा कभी नहीं हो सकता। यह बड़े अनर्थ की बात है कि कदापि किसी के मां बाप सौ सौ नहीं हो सकते किन्तु एक की एक मां और एक ही बाप होता है। अनुमान है कि मुसलमानों ने एक को ७२ स्त्रियाँ बहिश्त में मिलती हैंय लिखा है।। ८०।।

क्रमशः अगले अंक में...

दयानन्द शास्त्रार्थ प्रश्नोत्तर-संग्रह

नास्तिक तथा जैन मत

प्रश्नोत्तर

(पूज्यवर आत्माराम जी पचायत सरायोगियां लुधियाना और ठाकुरदास जी रईस गूजराँवाला जैन मतानुयायी सज्जनों के प्रश्नों के उत्तर)

प्रश्न- सत्यार्थप्रकाश में जो श्लोक लिखे हैं जैनियों के किस शास्त्र व ग्रन्थों के हैं ?

उत्तर - ये सब श्लोक बृहस्पति मतानुयायी' चार्वाक जिनके मत का दूसरा नाम लोकायत है और वे जैनमतानुयायी हैं, उनके मतस्थ शास्त्र व ग्रन्थों के हैं ?

श्लोकों का भाष्य निम्नलिखित है-

(१) :०: जब तक जिये सुख से जिये, मृत्यु गुप्त नहीं, भस्म हुए पीछे शरीर में फिर आना कहाँ ? (इसी प्रकार इस सम्प्रदाय के अन्तर्गत अभ्याक का मत है ।

(२) अग्निहोत्र, तीन वेद, त्रिपुड्र भस्म लगाना, यह निर्बुद्धि और साहस रहित लोगों की जीविका बृहस्पति ने रची है।

(३) अग्नि उष्ण तथा जल शीतल और छूने वाली ठंडी वायु किसी ने इनके बनाने वाले को देखा ? ये अपने स्वभाव से ऐसे हैं ।

(४) न स्वर्ग, न नरक, न कोई और मोक्ष, वर्ण औंर न आश्रम के काम फलदायक हैं ।

(५) अग्निहोत्र, तीन वेद, त्रिपुण्डू, भस्म लगाना, यह निर्बुद्धि तथा साहसरहित लोगों की जीविका ब्रह्मा ने बनाई है ।

(६) यदि पशु ज्योतिष्टोम यज्ञ में मारे जाने से स्वर्ग को जाता है तो यजमान अपने बाप को इसमें क्यों नहीं मार डालता ?

(७) मरे हुए जीवों को यदि श्राद्ध तृप्ति का कारण है तो मार्ग में लोगों को भोजन जलादि ले जाना व्यर्थ है ।

(८) स्वर्ग में बैठा हुआ यदि दान से तृप्त होता तो कोठे पर बैठा हुआ क्यों न होता ?

(९) जब तक जिये सुख से जिये, ऋण, लेकर घृत पीये, भस्म हुए पीछे शरीर में फिर आना कहाँ ?

(१०) यदि शरीर से निकल कर जीव परलोक को जाता है तो बन्धुओं के प्रेम से फिर लौटकर क्यों नहीं आता ?

(११) -यह सब जीवन निर्वाह का साधन ब्राह्मणों ने बना लिया है । मरे हुए जीवों की क्रियादि और कुछ नहीं है ।

(१२) -घोड़े का लिंग स्त्री ग्रहण करे भांडों ने इस प्रकार की बातें बना रखी हैं ।

(१३) - तीन वेद के बनाने वाले भांड, धूर्त निशाचर हैं और जर्फरी और तुफरी शब्द पण्डितों के कल्पित हैं।

(१४) मांस खाना राक्षसों का काम है।

इसी प्रकार ये सब श्लोक इस बात को प्रकट कर रहे हैं कि जैन मत के सम्प्रदायों ने कठोर निन्दा वेद मत की की है और जो कुछ मैंने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है, वह सब ठीक-ठीक है ।

''पहले पत्र के उत्तर में ला० ठाकुरदास आदि को लिख भेजा गया था कि जैन मत की कई शाखाएं हैं। यदि आप प्रत्येक शाखा के मन्त्र सिद्धान्त जानते होते तो आपको सत्यार्थप्रकाश के लेख में सन्देह कभी न होता। आप लोगों के प्रश्नों के उत्तर में विलम्ब इसलिये हुआ कि यदि कोई सज्जन सभ्य विद्वान् जैसा कि श्रेष्ठ पुरुषों को लेख करना चाहिये वैसा करता है तो उसी समय उत्तर भी लिखा दिया जाता है क्योंकि सभ्यतापूर्वक लेख के उत्तर में स्वामी जी विलम्ब कभी नहीं करते। देखिये ! अब पंचायत सरायोगियां लुधियाना ने योग्य लेख किया तो स्वामी जी ने उत्तर भी शीघ्र लिखवा दिया और अब भी लिख दिया गया है कि जितने सत्यार्थ प्रकाश विषयक आप लोगों के प्रश्न हों, सब लिखकर भेज दीजिये ताकि सबके उत्तर एक संग लिख दिये जावें । जैसा स्वामी जी ने लिखवाया था कि आत्मारामजी को जैन मत वाले शिरोमरिण पंडित गिनते हैं। इनका स्वामी जी का पत्र लेखानुसार समागम होता तो सब बातें शीघ्र ही पूरी हो जाती परन्तु ऐसा न हुआ और यह भी शोक की बात है कि हमने इस विषयक रजिस्टरी चिट्ठी पंचायत सरायोगियाँ लुधियाना को भेजी, उसका उत्तर भी अब तक नहीं मिला, न प्रश्न भेजे। किन्तु जो ठाकुरदास ने एक बात लिख भेजी थी कि यह श्लोक जैनमत के किस शास्त्र और किस ग्रन्थ के अनुसार हैं और जो बात करने के योग्य आत्माराम जी हैं उनका शास्त्रार्थ करने में निषेध लिख भेजा और ठाकुरदास जी की यह दशा है कि प्रथम चिट्ठी में संस्कृत और भाषा के लिखने में अनेक दोष लिखे हैं । अब आप लोग धर्म न्याय से विचार लीजिये कि क्या यह बात ऐसी होनी योग्य है कि जब-जब चिट्ठी ठाकुरदास ने लिखी तब-तब स्वामी जी के पास और उसमें जो वात शिष्ट पुरुषों के लिखने योग्य न थी, सब लिखी और जो योग्य हैं अर्थात् आत्माराम जी उसको बात करने और लिखने वा चिट्ठी पर हस्ताक्षर करने से अलग रखते हैं और एक यह कि ठाकुरदास जी से स्वामी जी का सामना कराते हैं क्या ऐसी बात करनी शिष्टों को योग्य है ? अब अधिक बात करते हो तो आप अपने मत के किसी योग्य विद्वान् को प्रवृत्त कीजिये कि जिससे हम और आपको सत्य और झूठ का निश्चय होकर बहुत उत्तम ज्ञान हो सके। बुद्धिमानों के सामने अधिक लिखना आवश्यक नहीं किन्तु अपनी सज्जनता उदारता, अपक्षता तथा बुद्धिमत्ता और विद्वत्ता में थोड़े लिखने से बहुत जान लेते हैं ।

मिति कार्तिक सुदि ४, शनिवार, संवत् १९३७ तदनुसार ६ नवम्बर सन् १८८०

कृपाराम मन्त्री, आर्यसमाज - देहरादून

परमाणुपरममहत्त्वान्तोऽस्य वशीकारः

एकाग्रता का विस्तार

-स्वामी विश्वंपरिव्राजक

महर्षि पतंजलि एवं महर्षि वेद व्यास ने--

'मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां...
भावनातश्चित्तप्रसादनम्

सूत्र से लेकर 'यथाभिमतध्यानाद्वा' सूत्र तक मन को प्रसन्न कर एकाग्र करने के अनेकों उपायों की चर्चा की है। मन को एकाग्र करने हेतु दिशा-निर्देश भी प्रदान किये हैं। ऋषियों के दिशा-निर्देशों को अपनाते हुए विभिन्न उपायों का आश्रय लेकर प्रारम्भिक योगाभ्यासी अपने प्राप्तव्य लक्ष्य तक पहुँच सकता है। जो योग साधक ऋषियों के कथन को आप्त-वचन मानकर पूर्ण रुचि से, निष्ठा से, श्रद्धा से, ज्ञानपूर्वक, पुरुषार्थ पूर्वक उपायों को अपनाकर लम्बे काल तक, निरन्तरता से, तपस्या पूर्वक, संयम पूर्वक अभ्यास करते हुए अपने मन को शान्त सत्वगुण से परिपूर्ण कर एकाग्र करता है। वही ईश्वर की ओर अग्रसर होता है।

मनुष्य जीवन हर समय एक जैसा नहीं रहता है अर्थात् बुद्धि हर समय एक जैसी नहीं रहती है, मन हर समय एक जैसा नहीं रहता है, इन्द्रियाँ भी एक जैसा कार्य नहीं करती हैं। व्यक्ति का शरीर भी हर समय एक जैसा नहीं रह पाता है। व्यक्ति के जीवन में नाना प्रकार की उलझनें, नाना प्रकार की बाधाएँ, नाना प्रकार की समस्याएँ, अलग-अलग परिस्थितियों में अन्य लोगों के व्यवहार अलग-अलग प्रभाव डालते हैं। अलग-अलग लोगों से अलग-अलग सम्बन्धों के कारण उनका अलग-अलग प्रभाव भी पड़ता है। इन सभी परिस्थितियों में योग साधक को परमेश्वर का ध्यान करना ही पड़ता है। उन परिस्थितियों में ध्यान करने वाले योगसाधक को अलग-अलग प्रकार के उपायों को अपनाना पड़ता है। क्योंकि कौन-सा उपाय कब, कैसे कारगर होगा, यह नहीं कहा जा सकता। इसलिए ऋषियों ने विभिन्न उपायों का निर्देश किया है। उन उपायों को बार-बार अपनाते हुए योगसाधक को अच्छा अनुभव भी हो जाता है कि कब कौनसा उपाय अपनाने से मन एकाग्र होगा।

योग साधक को लम्बे अभ्यास का अनुभव अच्छी प्रकार से हो जाता है। जब योग साधक को मन को रोकने का अच्छा अभ्यास हो जाता है तब योग साधक को क्या उपलब्धि होती है? उस उपलब्धि की चर्चा प्रस्तुत सूत्र से सूत्रकार एवं भाष्यकार प्रकट कर रहे हैं।

मन को स्थिर-एकाग्र करने का फल बताते हुए महर्षि पतंजलि कहते हैं कि 'परमाणु'-सूक्ष्म वस्तु अर्थात् जिससे और सूक्ष्म नहीं हो, ऐसी वस्तु को परमाणु कहते हैं। ऐसे परमाणु में योग साधक का मन एकाग्र होने में समर्थ हो जाता है। यह कोई छोटी-मोटी उपलब्धि नहीं है। 'परममहत्त्वान्तः' बड़ी से बड़ी वस्तु अर्थात् उससे और बड़ी वस्तु नहीं हो सकती। ऐसी बड़ी वस्तु को परममहत्त्वान्त कहते हैं। ऐसे बड़े पदार्थ में भी योगसाधक का मन एकाग्र होने में समर्थ हो जाता है। सूत्र में 'अस्य' शब्द मन के लिए आया है। 'वशीकारः' शब्द का अर्थ वशित्व से है अर्थात् वशीकरण-नियन्त्रण पूर्ण नियन्त्रण को वशीकार कहते हैं।

सूत्र की व्याख्या करते हुए महर्षि वेद व्यास लिखते हैं कि 'सूक्ष्मे निविशमानस्य परमाण्वन्तं स्थितिपदं लभत इति।' अर्थात् योगसाधक का मन सूक्ष्म से सूक्ष्म पदार्थ में एकाग्र होता हुआ अतिसूक्ष्म=परमाणु में भी एकाग्र हो जाता है। यहाँ पर सूक्ष्म से सूक्ष्म पदार्थ में मन को एकाग्र करने की बात कही गई है। इसे एक उदाहरण से समझ सकते हैं कि सेव फल की अपेक्षा बेर फल सूक्ष्म-छोटा है। सेव फल का क्षेत्र बड़ा है और बेर फल का क्षेत्र छोटा है। अपने मन को बेर में ही समायोजित करना है। अर्थात् मन को मानो न फैलाते हुए संकुचित करते हुए उस छोटे से बेर में एकाग्र करना है। जैसे बेर में एकाग्र करना पड़ता है, वैसे यदि तिल में एकाग्र करना पड़े, तो मन का कितना नियन्त्रण करना पड़ेगा। परन्तु निरन्तर अभ्यास से तिल में भी मन एकाग्र हो जायेगा, ठीक इसी प्रकार तिल से भी सूक्ष्म मिट्टी के एक कण में मन को एकाग्र करना है। इसके लिए अतिसंयम व निरन्तर अभ्यास की आवश्यकता होती है। मिट्टी के कण से भी सूक्ष्म वस्तु में मन को एकाग्र करना है। इस प्रकार सूक्ष्म से सूक्ष्म परमाणु पर्यन्त अति सूक्ष्म पदार्थ में मन को एकाग्र करना है। जिस प्रकार बाहर के सूक्ष्म पदार्थों में मन को एकाग्र करने का अभ्यास किया जाता है। उसी प्रकार अपने शरीर के भीतर-अन्दर भी मन को एकाग्र करना है। शरीर के एक अंग पर एकाग्र करके प्रत्यंग पर एकाग्र करना है। फिर ऊतक में एकाग्र करना है। ऐसे करते- करते शरीर के एक सूक्ष्म कण में मन को एकाग्र करना है। बाहर के पदार्थों में मन को एकाग्र करने की अपेक्षा शरीर के अन्दर एकाग्र करना अधिक कठिन होता है और अन्दर एकाग्र करने का अभ्यास ही सर्वश्रेष्ठ कहलाता है। क्योंकि अन्ततोगत्वा हमें शरीर के अन्दर ही समाधि लगानी है। इसलिए अधिक पुरुषार्थ शरीर के भीतर करना चाहिए।

महर्षि वेद व्यास आगे लिखते हैं कि 'स्थूले निविशमानस्य परममहत्त्वान्तं स्थितिपदं चित्तस्य।' अर्थात् योगसाधक का मन स्थूल से स्थूल पदार्थ में एकाग्र होता हुआ महत्परिमाण-बड़े पदार्थ में भी एकाग्र हो जाता है। सब से बड़ा पदार्थ आकाश है। यहाँ पर बड़े से बड़े पदार्थ में मन को एकाग्र करने की बात कही गई है। जैसे सूक्ष्म से सूक्ष्म पदार्थ में मन को एकाग्र करने के लिए मन को सब ओर से हटा कर केवल उस सूक्ष्म पदार्थ में एकाग्र करना है। यह कठिन कार्य है। ठीक इसी प्रकार बड़े से बड़े पदार्थ में मन को एकाग्र करना भी कठिन कार्य है। क्योंकि बड़े पदार्थ का क्षेत्रफल बड़ा होता है। उस बड़े क्षेत्रफल को पूरे मन का विषय बनाना है। उसमें कुछ भी न छूटे, तभी उस बड़े पदार्थ का बोध पूर्ण रूप से हो पायेगा। यह भी कोई छोटी- मोटी उपलब्धि नहीं है, अथक अभ्यास व पुरुषार्थ से संभव होने योग्य बहुत बड़ा कार्य है। इसके आगे महर्षि वेदव्यास लिखते हैं कि 'एवं तामुभयीं कोटिमनुधावतो योऽस्याप्रतीघातः स परो वशीकारः' अर्थात् इस प्रकार उन दोनों (सूक्ष्म - परमाणु व स्थूल- महत्परिमाण पदार्थों) में श्रद्धापूर्वक लगने वाले योगसाधक का मन अप्रतिघात-बिना बाधा के सबसे उत्तम मनोनियन्त्रण में होता है। मन के इस उत्तम मनोनियन्त्रण को महर्षि वेदव्यास ने 'परो वशीकारः' शब्द से कहा है। सूत्रकार महर्षि पतंजलि ने सूत्र में 'वशीकारः' शब्द से निर्देशित किया है और भाष्यकार ने 'परः' शब्द को वशीकार के साथ जोड़कर और अधिक महत्व दिया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि योगसाधक मन को एकाग्र करने के लिए अलग-अलग उपायों को अपना कर कितना पुरुषार्थ करता है। यह बात योगाभ्यास में रत योगसाधक ही समझ पायेंगे क्योंकि जिस विषय में जो पुरुषार्थ करते हैं, उस विषय को वे ही भली-भांति समझ सकते हैं। अन्य जन उतना अनुभव कर नहीं पाते हैं।

विषय का उपसंहार करते हुए महर्षि वेद व्यास लिखते हैं कि- 'तद्वशीकारात्परिपूर्णं योगिनश्चित्तं न पुनरभ्यासकृतं परिकर्मापेक्षत इति।' अर्थात् उस उत्तम मनोनियन्त्रण से परिपूर्ण योगसाधक का मन इतना सधा हुआ हो जाता है कि योगसाधक को मन को रोकने के लिए इधर-उधर भटकने की आवश्यकता नहीं रहती है। अर्थात् योगसाधक को मन को एकाग्र करने के लिए तरह-तरह के उपायों को अपनाने की आवश्यकता नहीं रहती है। एक उपाय से मन एकाग्र नहीं हो रहा है, तो दूसरे उपाय को लगा कर एकाग्र कर लिया जाये, ऐसा नहीं होगा। क्योंकि योगसाधक उन उलझनों, बाधाओं, समस्याओं कठिनाइयों से ऊपर उठ चुका होता है। अब किसी भी काल में, किसी भी स्थान में, किसी भी प्रसंग में बड़ी सरलता से योगसाधक अपने मन को तत्काल एकाग्र करने में कुशल हो चुका है। इसलिए महर्षि कह रहे हैं कि योगसाधक को मन को रोकने का अब किसी भी प्रकार का अभ्यास करने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती है। योगसाधक मन को एकाग्र करने का संकल्प लेकर किसी भी सूक्ष्म से सूक्ष्म पदार्थ या स्थूल से स्थूल पदार्थ में सरलता से एकाग्र कर लेता है। इसलिए प्रारम्भिक योगाभ्यासी को चाहिए कि वह ऋषियों के द्वारा प्रदर्शित दिशा-निर्देशों को अपना कर जिस किसी भी प्रकार से मन को एकाग्र करने के लिए जितने भी उपाय हो सकते हों, उन्हें अपनाये। किसी भी योग साधक को मन को एकाग्र करने में ढिलाई नहीं वर्तनी चाहिए। क्योंकि अनेक बार योगसाधक कुछ ही उपायों को अपना कर मन को एकाग्र नहीं कर पाते हैं तो हताश-निराश हो कर एकाग्र करना ही छोड़ देते हैं। ऐसा करने से कभी भी मन पर नियन्त्रण नहीं हो पायेगा। प्रयास कर-करके जब छोड़ दिया जाता है तो और अधिक गिरावट आती है। जिससे योगसाधक और पीछे चला जाता है। इसलिए इस विषय में योगसाधक को अत्यधिक जागरूक रहना पड़ता है। चाहे कितने ही बार मन को एकाग्र करने में असफलता मिले, परन्तु अभ्यास को दीर्घकाल तक, निरन्तर, विद्यापूर्वक, तपस्यापूर्वक, श्रद्धापूर्वक, संयमपूर्वक करने से लक्ष्य अवश्य ही मिलेगा। यह भी अभ्यास की महानता है।

●●●

पृष्ठ १ का शेष.....

नहीं है, जैसा कि हमारे पुरोहितों, कर्मकाण्डियों और तथाकथित याज्ञिकों ने भटका रखा है। स्मरण रखना चाहिए कि वेदमन्त्रों से राष्ट्र शब्द संकलित करके उनसे काष्ठाग्नि में घृतादि की आहुतियाँ डलवा देना राष्ट्रभृत् यज्ञ नहीं है। जिन मन्त्रों में अक्षि या चक्षु शब्द प्रयोग हुए हों, उन्हें संकलित करके आहुतियाँ दिला देना नेत्र-यज्ञ या चक्षु-यज्ञ का उपहास मात्र होगा।

मैं अपने युवकों और बुद्धिजीवियों से आग्रह करूँगा कि यदि आप मेरी कही हुई बातों में कुछ तथ्य समझते हों, तो आपको आर्यसमाज के परिवारों में प्रचलित वर्तमान यज्ञों की कुप्रथा को रोकने के लिए कुछ सक्रिय कदम उठाने होंगे, नहीं तो कैन्सर की तरह बढ़ता हुआ यह कर्मकाण्ड हमें मध्यकालीन हिन्दुओं की तरह ही विकृत और पथभ्रष्ट कर देगा। आर्यसमाज में यज्ञ के रूप में फैला हुआ यह कैन्सर चालीस-पचास वर्ष ही पुराना है, अभी तो हम इसकी रोकथाम कर सकते हैं, अन्यथा आगे रोकना कठिन होगा।

मेरी आयु ८५ वर्ष है, आगे की बात ईश्वर जाने, इसीलिए कुछ तीखे उपाय बता रहा हूँ, हो सकता है कि मेरे मित्रों को और आर्यसमाज के वर्तमान कर्णधारों को शायद ये पसन्द न आवें। कुछ उपाय ये हैं -

१. विद्वान युवकों को चाहिए कि वर्तमान यज्ञों के विरुद्ध उचित वातावरण तैयार करें (प्यार और स्नेह से)
२. जहाँ-कहीं भी ये कैंसर-यज्ञ हों, उनका सक्रिय विरोध करें।
३. स्वामी दयानन्द ने दो ग्रन्थ हमें व्यावहारिक महत्त्व के दिए हैं - पंचमहायज्ञविधि और संस्कारविधि। संस्कारविधि का सामान्य प्रकरण केवल १६ संस्कारों और नवशस्येष्टि संवत्सरेष्टि एवं शालानिर्माण विधि के लिए है। कर्मकाण्ड एवं विनियोगों को यहीं तक सीमित रक्खें।
४. भारतवर्ष में कैंसर-यज्ञ चलने लगे हैं और इनकी छुत देश के बाहर भी फैलने लगी है। हमें चाहिए कि वह हवा देश के बाहर न जावे। (मैं वेदपारायण यज्ञ और मृत्युंजय यज्ञों को कैन्सर-यज्ञ कहता हूं।)
५. लोगों को बतावें कि जो हम विद्या-संस्थायें खोलते हैं (चाहे गुरुकुल शैली की या कॉलेज शैली की) ये संस्थायें ही हमारी यज्ञस्थली हैं, हमारे सभी चिकित्सालय, अनाथाश्रम, सेवागृह, फैक्टरियाँ, पशुधन-विस्तारशालायें - इन सबको आर्यसमाज यज्ञ मानता है। दीनदुःखियों की सहायता के लिए, दुर्भिक्ष-पीडितों और बाढ़ से सन्तप्त व्यक्तियों की सहायता के लिए जो भी कुछ हम करेंगे, वह सब यज्ञ है।

आर्यसमाज के प्रारम्भिक युग में लाला मुन्शीराम, लाला लाजपतराय, लाला हंसराज आदि मनीषियों ने ऐसा ही किया था। वे हमारे महान् याज्ञिक थे, कर्मयोगी थे। आज हम कर्मयोगी नहीं कर्मकाण्डी पैदा कर रह हैं। मिशनरी नहीं, पुरोहित मण्डली तैयार कर रहे हैं।

युवकों से मेरा आग्रह है कि जहां-कहीं भी कर्मकाण्डियों द्वारा वेदपारायण यज्ञ होता देखें, मृत्युंजय-यज्ञ देखें, वर्षा के निमित्त यज्ञ करते-कराते देखें, उनके विरुद्ध सक्रिय विरोध और रोष प्रकट करें।

महर्षि दयानन्द का जन्म १८२४ ई. में हुआ था। उनकी द्वितीय जन्मशती २०२४ ई. में मनाई जायेगी। तब तक हमें अपने कैन्सर-यज्ञों को दूर कर देना चाहिए।

अगली शती के लिए वर्तमान आर्यसमाज के सामने जीता-जागता गौरवमय कार्यक्रम होना चाहिए। केवल नारे, लंगर और जलूसों से काम न चलेगा।

मूर्तिपूजा अवैदिक होने पर भी हमारे देश से दूर क्यों नहीं हुई, क्योंकि यह पण्डितों, पुरोहितों, शंकराचार्यों और महन्तों की जीविका बन गई है। आर्यसमाज के कर्मकाण्डी यज्ञ भी जीविका के साधन बन गये, तो आप आगे इन्हें बन्द न कर सकेंगे।

स्रोत : परोपकारी पत्रिका का अप्रैल (प्रथम) २०१७ अंक,
पृष्ठ २१-२३, प्रस्तुतकर्ता : भावेश मेरजा,

आर्य मित्र
नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर./फैक्सः ०५२२-२२८६३२८
प्रधान-०९४१२६७८५७१, मंत्री-०९४१५३६५५७६, सम्पादक-९४५१८८१९७७
ई.मेल-apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,
.....
.....
.....

ईश्वर के 60 विभिन्न नाम और भ्रान्ति निवारण

डॉ० डी.के. गर्ग

भाग 3 अंतिम – साभार–सत्यार्थ प्रकाश

ईश्वर निराकार और एक ही है लेकिन ईश्वर को उसके कार्यो के अनुसार अलग अलग नामो से पुकारा जाता है। इसलिए निराकार ईश्वर को शरीरधारी बना देना अनुचित है। ये जो विभिन्न तस्वीर ईश्वर के नाम की दिखाई देती है उनमे ईश्वर की शक्ति और छवि को समझने के लिए दिखाया जाता है लेकिन ये कहने की ये तस्वीर जो ईश्वर है और उसमे प्राण फूकना पाखंड है, क्योकि ये तस्वीर ईश्वर नहीं हो सकती जिसमे असंख्य गुणों का भण्डार हो और समुन्द्र, सूर्य, पृथ्वी आदि के निर्माण की शक्ति हो, भूकंप से जो धरती हिला देता है उस ईश्वर की शक्ति को पहचान लेना और उसी की स्तुति करना चाहिए।

४१- 'बृहत्' शब्दपूर्वक (पा रक्षणे) इस धातु से 'डति' प्रत्यय, बृहत् के तकार का लोप और सुडागम होने से 'बृहस्पति' शब्द सिद्ध होता है। 'यो बृहतामाकाशादीनां पतिः स्वामी पालयिता स बृहस्पतिः' जो बड़ों से भी बड़ा और बड़े आकाशादि ब्रह्माण्डों का स्वामी है, इस से उस परमेश्वर का नाम 'बृहस्पति' है।

४२- (पृथु विस्तारे) इस धातु से 'पृथिवी' शब्द सिद्ध होता है।' 'यः पर्थति सर्वं जगद्विस्तृणाति तस्मात् स पृथिवी' जो सब विस्तृत जगत् का विस्तार करने वाला है, इसलिए उस ईश्वर का नाम 'पृथिवी' है।

४३- (मगि गत्यर्थक) धातु से 'मंगेरलच्' इस सूत्र से 'मंगल' शब्द सिद्ध होता है। 'यो मंगति मंगयति वा स मंगलः' जो आप मंगलस्वरूप और सब जीवों के मंगल का कारण है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'मंगल' है।

४४- (भज सेवायाम्) इस धातु से 'भग' इससे मतुप् होने से 'भगवान्' शब्द सिद्ध होता है। 'भगः सकलैश्वर्य्यं सेवनं वा विद्यते यस्य स भगवान' जो समग्र ऐश्वर्य से युक्त वा भजने के योग्य है, इसीलिए उस ईश्वर का नाम 'भगवान्' है।

४५- (बुध अवगमने) इस धातु से 'बुध' शब्द सिद्ध होता है। 'यो बुध्यते बोध्यते वा स बुधः' जो स्वयं बोधस्वरूप और सब जीवों के बोध का कारण है। इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'बुध' है।

४६- (ईशुचिर्पूतीभावे) इस धातु से 'शुक्र' शब्द सिद्ध हुआ है। 'यः शुच्यति शोचयति वा स शुक्रः' जो अत्यन्त पवित्र और जिसके संग से जीव भी पवित्र हो जाता है, इसलिये ईश्वर का नाम 'शुक्र' है।

४७- (चर गतिभक्षणयोः) इस धातु से 'शनैस्' अव्यय उपपद होने से 'शनैश्चर' शब्द सिद्ध हुआ है। 'यः शनैश्चरति स शनैश्चरः' जो सब में सहज से प्राप्त धैर्यवान् है, इससे उस परमेश्वर का नाम 'शनैश्चर' है।

४८- (चर गतिभक्षणयोः) आङ्पूर्वक इस धातु से 'आचार्य्य' शब्द सिद्ध होता है। 'य आचारं ग्राहयति, सर्वा विद्या बोधयति स आचार्य ईश्वरः' जो सत्य आचार का ग्रहण करानेहारा और सब विद्याओं की प्राप्ति का हेतु होके सब विद्या प्राप्त कराता है, इससे परमेश्वर का नाम 'आचार्य' है।

४९- (बुध अवगमने) इस धातु से 'क्त' प्रत्यय होने से 'बुद्ध' शब्द सिद्ध होता है। 'यो बुद्धवान् सदैव ज्ञाताऽस्ति स बुद्धो जगदीश्वरः' जो सदा सब को जाननेहारा है इससे ईश्वर का नाम 'बुद्ध' है।

५०- 'सर्वाः शक्तयो विद्यन्ते यस्मिन् स सर्वशक्तिमानीश्वरः' जो अपने कार्य करने में किसी अन्य की सहायता की इच्छा नहीं करता, अपने ही सामर्थ्य से अपने सब काम पूरा करता है, इसलिए उस परमात्मा का नाम 'सर्वशक्तिमान्' है।

५१- (णीप्रापणे) इस धातु से 'न्याय' शब्द सिद्ध होता है। 'प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः।' यह वचन न्यायसूत्र के ऊपर वात्स्यायनमुनिंत भाष्य का है। 'पक्षपातराहित्याचरणं न्यायः' जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों की परीक्षा से सत्य-सत्य सिद्ध हो तथा पक्षपातरहित धर्मरूप आचरण है वह न्याय कहाता है। 'न्यायं कर्तुं शीलमस्य स न्यायकारीश्वरः' जिस का न्याय अर्थात् पक्षपातरहित धर्म करने ही का स्वभाव है, इससे उस ईश्वर का नाम 'न्यायकारी' है।

५२- (दय दानगतिरक्षणहिसादानेषु) इस धातु से 'दया' शब्द सिद्ध होता है। 'दयते ददाति जानाति गच्छति रक्षति हिनस्ति यया सा दया, बह्वी दया विद्यते यस्य स दयालुः परमेश्वरः' जो अभय का दाता, सत्याऽसत्य सर्व विद्याओं का जानने, सब सज्जनों की रक्षा करने और दुष्टों को यथायोग्य दण्ड देनेवाला है, इस से परमात्मा का नाम 'दयालु' है।

५३- 'अन्तर्यन्तुं नियन्तुं शीलं यस्य सोऽयमन्तर्यामी' जो सब प्राणी और अप्राणिरूप जगत् के भीतर व्यापक होके सब का नियम करता है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'अन्तर्यामी' है।

५४- 'महत्' शब्द पूर्वक 'देव' शब्द से 'महादेव' सिद्ध होता है। 'यो महतां देवः स महादेवः' जो महान् देवों का देव अर्थात् विद्वानों का भी विद्वान, सूर्यादि पदार्थों का प्रकाशक है, इसलिए उस परमात्मा का नाम 'महादेव' है।

५५- (विष्लृ व्याप्तौ) इस धातु से 'नु' प्रत्यय होकर 'विष्णु' शब्द सिद्ध हुआ है। 'वेवेष्टि व्याप्नोति चराऽचरं जगत् स विष्णुः' चर और अचररूप जगत् में व्यापक होने से परमात्मा का नाम 'विष्णु' है।

५६- (गण संख्याने) इस धातु से 'गण' शब्द सिद्ध होता है, इसके आगे 'ईश' वा 'पति' शब्द रखने से 'गणेश' और 'गणपति शब्द' सिद्ध होते हैं। 'ये प्रकृत्यादयो जडा जीवाश्च गण्यन्ते संख्यायन्ते तेषामीशः स्वामी पतिः पालको वा' जो प्रकृत्यादि जड़ और सब जीव प्रख्यात पदार्थों का स्वामी वा पालन करनेहारा है, इससे उस ईश्वर का नाम 'गणेश' वा 'गणपति' है।

५७- (डुं करणे) 'शम्' पूर्वक इस धातु से 'शंकर' शब्द सिद्ध हुआ है। 'यः शंकल्याणं सुखं करोति स शंकरः' जो कल्याण अर्थात् सुख का करनेहारा है, इससे उस ईश्वर का नाम 'शंकर' है।

५८- 'महत्' शब्द पूर्वक 'देव' शब्द से 'महादेव' सिद्ध होता है। 'यो महतां देवः स महादेवः' जो महान् देवों का देव अर्थात् विद्वानों का भी विद्वान्, सूर्यादि पदार्थों का प्रकाशक है, इसलिए उस परमात्मा का नाम 'महादेव' है।

५९- (प्रीं तर्पणे कान्तौ च) इस धातु से 'प्रिय' शब्द सिद्ध होता है। 'यः पृणाति प्रीयते वा स प्रियः' जो सब धर्मात्माओं, मुमुक्षुओं और शिष्टों को प्रसन्न करता और सब को कामना के योग्य है, इसलिए उस ईश्वर का नाम 'प्रिय' है।

६०- (भू सत्तायाम्) 'स्वयं' पूर्वक इस धातु से 'स्वयम्भू' शब्द सिद्ध होता है। 'यः स्वयं भवति स स्वयम्भूरीश्वरः' जो आप से आप ही है, किसी से कभी उत्पन्न नहीं हुआ, इस से उस परमात्मा का नाम 'स्वयम्भू' है।

आर्य वीरांगना योग एवं चरित्र निर्माण शिविर

जिला आर्य प्रतिनिधि सभा बागपत द्वारा सात द्विवसीय आर्य वीरांगना योग एवं चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन चौधरी केहर सिंह दिव्य पब्लिक स्कूल कोताना रोड, बड़ोत में किया। शिविर का समापन दिनांक १६ जून, २०२३ को समारोह पूर्वक किया गया।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. सत्यपाल सिंह सांसद बागपत थे अध्यक्षता डॉ. मनीष तोमर तथा संचालन आचार्य रवि शास्त्री ने किया।

समारोह में प्रधाचार्य श्री ओमवीर तोमर, सर्वश्री रामपाल तोमर, कपिल आर्य, धर्मपाल त्यागी, दीपक शर्मा, डा. अमित खोखर, सुभाष वैरागी, सुरेन्द्र ठेकेदार, राजेश उज्जवल, धर्मवीर आर्य, रवि प्रधान, उदय मुनि, भरत मुनि, स्वामी ओमानन्द सरस्वती, सुश्री सुमेधा आर्या, मीरा वर्मा आदि सहित सैकड़ों गणमान्य लोग मौजूद थे।

अखिल भारतीय राजार्य सभा का राष्ट्रीय अधिवेशन का भव्य समापन

अखिल भारतीय राजार्य सभा का राष्ट्रीय अधिवेशन आर्य समाज शाहजहांपुर में दिनांक ३० जून, २०२३ को सम्पन्न हुआ। वह आर्य समाज जो पंडित राम प्रसाद बिस्मिल ठाकुर रोशन सिंह और राजेंद्र लाहिड़ी का कर्म स्थली रहा स्वतन्त्रता संग्राम के आंदोलन में...इस पवित्र स्थल पर आकर हम सब गौरवान्वित हुए। आर्य समाज बिसवां... के तत्वावधान में राजार्य सभा के विद्वानों को सम्मानित किया गया, राष्ट्रीय अध्यक्ष चंद्रदेव शास्त्री,, स्वामी मोहन देव यति...आर्य करण सिंह...श्री आजाद सिंह जी,, महावीर आर्य, बलबीर सिंह जी, राम कुमार आर्य, सनोज रस्तोगी जी आदि का उत्तरीय, वस्त्र, यजुर्वेद सत्यार्थ प्रकाश और स्मृति चिन्ह भेंट कर सम्मानित किया, सभा के अधिकारियों ने आर्य समाज बिसवां का आभार व्यक्त किया, आर्य समाज बिसवां के उप प्रधान श्री रमापति रस्तोगी जी का सहयोग सराहनीय रहा।

आर्य समाज यमलार्जुन पुर बहराइच के वार्षिक उत्सव में सम्मिलित होने का सुअवसर प्राप्त हुआ, महर्षि दयानन्द की, २००वीं जयंती आर्य जगत मना रहा है।

आर्य समाज बिसवां की ओर से वयोवृद्ध विद्वान श्री पृथ्वीराज सिंह जी, प्रधान बसंत लाल जी, राजस्थान से पधारे वयोवृद्ध भजनोपदेशक श्री भूपेन्द्र सिंह जी, श्री लेखराज आर्य जी, ओमकार नाथ शास्त्री, आदि को यजुर्वेद, स्मृति चिन्ह और उत्तरी भेंट कर सम्मानित किया गया, सभा प्रधान जी ने आर्य समाज बिसवां को धन्यवाद दिया।

साभार-अजीत आर्य मंत्री आर्य समाज बिसवां सीतापुर।

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक–पंकज जायसवाल भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस,
5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शुभम् आफ्सेट प्रिंटर्स, कैसरबाग, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित
लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है–सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।